REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 11 | ISSUE - 2 | NOVEMBER - 2021

''प्राचीन भारतीय संस्कृति के सुदूर दक्षिण पूर्व एशियाई देशों पर प्रभाव एवं वर्तमान परिप्रेक्ष्य में महत्व''

डॉ. श्रीकृष्ण सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर–इतिहास, पी.के.के. राजकीय महाविद्यालय, जलालाबाद, शाहजहाँपुर

प्राचीन भारतीय अधिवासी बड़े ही उत्साही, कला–कौशल प्रवीण संसारिक वैभव तथा अध्यात्मिक अभ्युदय के शिखर पर पहुँचने के लिए सतत् प्रयत्नशील रहे, यही नहीं शिखर पर पहुँचने के पश्चात् भी संतुष्ट होकर शान्त नहीं रहे बल्कि वे अपने अथक प्रयासों से भारत के सुदूर प्रान्तों और द्वीपों पर अपनी संस्कृति का प्रसार किया। यद्धपि वर्तमान समय में अन्य शासकों द्वारा काफी परिवर्तन कर दिया गया है, फिर भी उन देशों के निवासियों में भारतीय रीति–रिवाज एवं संस्कृति के अवयव आज भी दिखाई पड़ते हैं। उनके प्राचीन इतिहास के अध्ययन करने से स्पष्ट मालूम पड़ता है कि उन पर भारतीय संस्कृति की ऐसी गहरी छाप पड़ी है कि अनेकों शताब्दियों बाद भी उसके तत्वों को मिटाने में कदापि सम्भव नहीं हो पायी। भारतीय संस्कृति के चिह्न मध्य–एशिया के खोतान तथा तुर्किस्नान में ही नहीं बल्कि एशिया के दक्षिण पूर्वी द्वीप समूहों में स्थित, सुमात्र, जावा, बाली, बोर्निया आदि में तथा मलाया चम्पा, कम्बोडिया, थाईलैण्ड प्रांतों में अधिकता से दिखाई पड़ता है। इन सभी क्षेत्रों में भारत के किसी न किसी कोने से लोग इन द्वीप समूहों पर अपना अधिपत्य स्थापित कर अपनी संस्कृति का प्रचार–प्रसार किया। इस प्रकार इन लोगों ने वृहत् भारत निर्माण किया।

प्राचीन भारतीय साहित्य के अध्ययन से प्रकट होता है कि ईसवी–पूर्व शताब्दियों में भी भारतीयों को समीपवर्ती द्वीपों का ज्ञान था रामायण तथा पुराणों में यवद्वीप तथा सुवर्णद्वीप शब्द प्रयुक्त हुए हैं, जिनसे आधुनिक जावा व सुभात्रा से समानता की जा सकती है। रामायण में जावा के सात छोटे–छोटे राज्यों का वर्णन मिलता है।[1] बालि तथा सुमात्रा के निवासियों को केलिंग तथा पांडिय आदि नामों से पुकारा जाता था, अर्थात् यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा कि विभिन्न प्रांतों से भारतीयों के उन स्थानों में उपनिवेश बनाने के कारण नाम दिए गए हैं। जावा के निवासी दक्षिण भारतीय होने का प्रतिनिधित्व करते हैं।[2]

वृहत्तर में भारतीय के उपनिवेश तथा संस्कृति का प्रसार होने का एक मुख्य कारण व्यापार ही था, भारत मध्य–एशियाई तथा पूर्वी द्वीप समूहों में व्यापारिक संबंध स्थापित होने से भारतीयों तथा तत्देशीय लोगों में विचार विनिमय होना स्वाभाविक हो जाता है। व्यापार के साथ–साथ भारतीय सांस्कृति के प्रभाव से उन्होंने अपने को ओत–पोत कर लिया होगा जो सर्वधा स्वभाविक ही था।[3] मध्य एशिया तथा सुदूर पूर्वीय द्वीप समूहों के साथ व्यापारिक वर्णन जातक ग्रंथों में मिलता है,[4] इस व्यवस्था पर गहरी छाप गुप्तकालीन शासनकाल में अत्यधिक पड़ी तथा व्यापारिक संबंध और अधिक प्रगाढ़ हुए। इन द्वीपों तथा प्रायद्वीपों से होते हुए भारतीय व्यापार जल मार्ग चीन तक जाता था।[5] जहाँ से रेशमी वस्त्र भारत में आते थे। कालीदास ने भी चीन से रेशमी वस्त्र आने के संबंध में वर्णित किया है।[6] चीनी यात्री हवेनसांग भी मध्य एशिया होकर भारत आए।

द्वीप समूहों से संबंध स्थापित करके ही भारतीय संतुष्ट नहीं हुए बल्कि उन्होंने समस्त द्वीपों पर अपना आधिपत्य स्थापित किया। टालेमी ने लिखा है कि पूर्वी समुद्र में स्थित द्वीपों में भारतीयों ने अपना निवास स्थान बनाया था। ईसा की तीसरी शताब्दी में उत्तरी भारत से एक चम्पा राजा का आगमन उल्लेख मिलता है।[7] इसी समय भारतीयों द्वारा भी अपना उपनिवेश बनाया।[8] उपनिवेश संबंधी बातों की पुष्टि अनेकों लेखों से भी होती है। दूसरी शदी में चम्पा में भारतीय निवासियों का उपनिवेश होने का उल्लेख मिलता है।[9] जावा में जनश्रुति के आधार पर ज्ञात होता है कि छठी शताब्दी ईस्वी में गुजरात के एक राजकुमार ने पाँच सहस्त्र मनुष्यों के साथ उपनिवेश बनाया।[10] उसमें कृषक, सैनिक, कलाविद तथा वैद्य भी सम्मिलित थे। विद्वानों का अनुमान है कि जावा चम्पा कम्बोडिया आदि देशों में पहली शताब्दी के आस–पास ही भारतीय उपनिवेश की स्थापना हुई होगी, तीसरी शदी तक वहाँ एक हिन्दू राज्य स्थापित हो गया था।[11] इसी तरह मध्य एशिया के खोतान, कूचा, मीरान तथा तुयेनहांग में भारतीय बस गए।

भारतीयों ने सुदूर दक्षिण पूर्वी द्वीप समूहों में अपना उपनिवेश स्थापित करने के पश्चात् नगरों के नामों को अपने ढंग से रखना प्रारंभ किया, पाँचवी सदी के सुमात्रा, वोर्निया[12], चम्पा[13] तथा कम्बोडिया[14] के राजा भद्रवर्मा और महेन्द्र वर्मा के नाम से प्रसिद्ध थे। स्याम के राजाओं ने भारत के प्राचीनतम नामों का अुनकरण कर अपना नाम 'राम' तथा राजधानी का नाम 'अयोध्या' रखा था।[15] इसी प्रकार कम्बोडिया में भी 'जयादित्यपुर', 'श्रेष्ठपुर' आदि नामों का उल्लेख मिलता है।[16]

भारतीय लोगों ने द्वीपों तथा प्रायद्वीपों में अपना उपनिवेश ही नहीं बनाया बल्कि भारतीय रीति–रिवाज पर पठन–पाठन तथा भारतीय साहित्य का प्रचार–प्रसार किया। भारत में जो सम्मान 'संस्कृत' भाषा को था वही सम्मान उसका उन द्वीप समूहों में भी था, देवता का आह्वान, दान का वर्णन तथा समस्त महत्वपूर्ण विषयों का कीर्तन संस्कृत में ही किया जाता था।[17] चौथी तथा पाँचवी शताब्दी में कम्बोडिया, चम्पा, जावा, बाली आदि में जितने लेख मिले हैं वे सभी संस्कृत भाषा में हैं।[18] वहाँ का शासक भद्रवर्मा चारों वेद षड्दर्शन, बौध साहित्य, व्याकरण तथा उत्तर कल्प आदि विषयों का प्रकाण्ड विद्वान था।[19] डॉ. मजूमदार ने एक विस्तृत उल्लेख किया है कि चम्पा में चार वेद षड्दर्शन, महायान दर्शन, पाणिनि व्याकरण, रामायण, महाभारत, मनु, नारद स्मृतियाँ आदि अन्य विविध भारतीय साहित्यों का अनुशीलन यहाँ के निवासी करते थे।[20] यहाँ के निवासियों द्वारा पूजा–गृह के दीवालों पर रामायण तथा महाभारत के चित्र खीचें हुए दिखाई पड़ते हैं।[21]

उपनिवेशों में भारतीयों के निवास करने के कारण उन स्थानों में भारतीय सामाजिक नियम तथा रीति–रिवाज़ का अनुकरण होने का उल्लेख मिलता है। दक्षिणी सुमात्रा के स्वतंत्र शासक भारतीय सामाजिक प्रणाली के अनुसार जीवन प्रणाली का दर्शन मिलता है।[22] चम्पा में भी चार वर्ण का उल्लेख मिलता है।[23] चारों वर्ण अपना–अपना कार्य नियमानुसार करने तथा प्रेम से आपस में जीवन यापन का उल्लेख है। ब्राह्मण तथा क्षत्रिय जाति में अन्तरजातीय विवाह के कारण एक ब्रह्म–क्षत्रिय नामक वर्ण की उत्पत्ति हो गई थी।[24] चम्पा के निवासियों का जल मार्ग चीन, जावा व सुमात्रा तक विस्तृत था।[25] वोर्नियाँ में चौथी शताब्दी का एक यूप लेख मिला है जिसके वर्णन से ज्ञात होता है कि ब्राह्मण जनता वैदिक ढंग पर यज्ञ करती थी।[26]

भारत की तरह चम्पा में भी राजा को ईश्वर का अवतार माना जाता था, वह भारतीय राजाओं की तरह शासन का समस्त प्रबंध करता था। वह राजकीय पदाधिकारियों की नियुक्ति करता था, जो शासन कार्य में राजा की सहायता करते थे।[27] सामाजिक और राजनैतिक जीवन प्रणाली के साथ–साथ लोगों ने भारतीय धार्मिक भावों का भी, वहाँ के लोगों ने स्वागत किया। यही कारण है कि इन देशों में शैव, वैष्णव तथा बौद्ध धर्म का प्रचार और विकास दिखाई पड़ता है। डॉ. कृष्णास्वामी ऐयंगर का मत है कि उपनिवेशों में वैष्णव, शैव तथा बौद्ध धर्म का क्रमशः प्रचार प्रसार हुआ होगा।[28] जावा, समुत्रा तथा कम्बोडिया[29] में चौथी तथा पाँचवी शताब्दियों के कई लेख मिले हैं, जिनके वर्णन में राजाओं के द्वारा विष्णु–भगवान के मंदिर निर्माण का वर्णन वहाँ के लेखों में मिलता है कि विष्णु की मूर्ति गरूण्वाही या अनन्तशायी ढंग की बनायी जाती थी।[30] चौथी शताब्दी में चीनी यात्री फाहियान ने जावा में ब्राह्मण धर्म का वर्णन किया है।[31] मलाया प्रायद्वीप में सातवीं शताब्दी तक की तकोय प्रशस्ति में पर्वत पर नारायण विष्णु के मंदिर निर्माण का उल्लेख मिलता है।[32] थाईलैण्ड में बाहरवी शदी तक गुप्तशैली की विष्णु और शिव की अनेक धातु मूर्तियाँ मिलती हैं।[33] इन समस्त विवरणों से स्पष्ट होता है कि वैष्णव धर्मावलम्बी गुप्त नरेशों के समय में वैष्णव धर्म का प्रचार उपनिवेश में हुआ होगा। गुप्तकाल में सामुद्रिक व्यापार की प्रचूर उन्नति के कारण प्रायद्वीप तथा द्वीप–समूहों से भारत का घनिष्ठ संबंध स्थापित हुआ होगा।

वैष्णव धर्म के पश्चात् शैव मत का अधिक प्रचार प्रसार हुआ; परन्तु वैष्णव के अभ्युदय के समय शैव मतावलम्बी भी बहुसंख्यक संख्या में मौजूद थे। उल्लेख मिलता है कि चम्पा के एक राजा प्रकाश धर्म ने ईशानेश्वर (शिव) का एक मंदिर बनवाया था, इन मूर्तियों के साथ चौथी शताब्दी में भद्रेश्वर नामक शिवलिंग की स्थापना हुई थी।[34]

वैष्णव तथा शैव धर्म के पश्चात् बौद्ध धर्म का प्रचार–प्रसार हुआ होगा, तिब्बती इतिहास के लेखक तारानाथ का कथन है कि वसुवन्धु के शिष्यों ने इण्डोचाइना में महामान धर्म का प्रचार किया।[35] इन द्वीपों में प्रारम्भ में बौद्ध धर्म के हीनयान का प्रचार था या नहीं स्पष्ट नहीं कहा जा सकता पर महायान के स्पष्ट चिन्ह मिलते हैं। सातवीं सदी के चीनी यात्री इत्सिंग ने सुमात्रा में बौद्ध धर्म के प्रचार का वर्णन किया है।[36] डॉ. कृष्णास्वामी का मत है कि इन द्वीप समूहों में पाँचवीं सदी से सातवीं शताब्दी तक बौद्ध धर्म का प्रचुर प्रचार था। यही कारण है कि जावा में एक विशाल बौद्ध मंदिर वोरोबुदुर मिलता है, जिसके निर्माण तिथि आठवीं शताब्दी बताई गई है।[37]

उपर्युक्त तथ्यों के विवेचना के पश्चात् इन द्वीप समूहों के कला कृतियों पर ध्यान दिया जाय तो स्पष्ट हो जाता है कि इन द्वीप समूहों में भारतीय कला ने कितना गहरा प्रभाव डाला है। चम्पा तथा कम्बोडिया में गुप्तकला के अनुकरण पर मंदिर तैयार किए गए, उनकी बनावट पर उत्तरी भारत की छाप स्पष्ट दिखाई पड़ती है। वे नागर शैली शिखर प्रणाली के अनुसार बनाए गए थे।[38] पाँचवीं सदी में इण्डोचीन में कला की बहुत उन्नति हुई, यह विकास गुप्तकालीन कला के कारण अवश्य रहा होगा। डॉ. कुमार स्वामी का कथन है कि छठी–सातवीं शताब्दी में कम्बोडिया की समस्त ईमारतें गुप्त शैली में बनाई जाती थी।[39] डॉ. मजूमदार का मत है कि चम्पा की कला का भारत से अभ्युदय हुआ तथा चम्पा–जावा और बाली के मंदिरों में शिखर तथा आमलक का प्रयोग मिलता है, राम और कृष्ण संबंधी चित्र मंदिर के मृण्मय पदार्थों पर अंकित है। बौद्ध मंदिर होने के कारण जावा के बोरोवुदुर नामक स्तूप पर जातक संबंधी चित्र अंकित हैं।[41] इस प्रकार विद्वानों का मत है कि वृहत्तर भारत की वास्तु शैली की नींव गुप्त कालीन पहाड़पुर (उत्तरी–बंगाल) के मंदिर में डाली गयी थी।[42]

उपनिवेशों की सभी सामग्रियों के अध्ययन के पश्चात् सर्वव्यापी हो जाता है कि सभी विषयों पर भारतीयता के पुट विद्यमान हैं। साहित्य के अतिरिक्त वहाँ के लिपि पर भी दक्षिण भारतीय प्रभाव है।[43] प्रथम शताब्दी से लेकर सहस्त्रों वर्षों तक भारत का सुदुर–दक्षिण पूर्व द्वीप समूहों से संबंध बना रहा, व्यापार के साथ–साथ भारतीय सामाजिक रीति–रिवाज, धर्म, साहित्य, कला आदि का विस्तार उन विविध स्थानों पर हुआ।[44] विद्वानों का विचार है कि दक्षिण भारत ने उपनिवेशों में भारतीय सभ्यता के विस्तार में अत्यधिक हाथ बँटाया, पूर्वी तट पर ताम्रलिप्त एक बहुत बड़ा बंदरगाह था, जहाँ से गुप्तकालीन उत्तरी भारत की सभ्यता वृहत्तर सुदूर दक्षिण पूर्व के देशों में फैली।[45] उपनिवेशों में भारतीय संस्कृति का विकास गुप्त काल में ही हुआ, गुप्त सम्राट चन्द्र गुप्त द्वितीय चन्द्र गुप्त विक्रमादित्य द्वारा पाँचवीं सदी में पश्चिमी भारत के शक शासकों को परास्त किए थे[46] यही कारण है कि वहाँ के 'शक' शासकों ने अपना उपनिवेश अन्यत्र बनाए। इस प्रकार इस तथ्य को गुजरात के निवासी जावा के राजकुमार से जोड़ कर देखा जाना समीचीन होगा, जो जावा की जनश्रुतियों में पाया जाता है। गुप्तों के साम्राज्य काल में भारतीय पोत–निर्माण की कला तथा जल मार्ग द्वारा आवागमन अपनी पराकाण्ठा पर पहुँचा था[47], जिससे अनुमान लगाया जाता है कि गुप्तों के समय में ही वृहत्तर भारत से अधिकाधिक संबंध स्थापित होना स्वाभाविक लगता है। गुप्तकाल में ही भारतीय संस्कृति के सर्वाधिक विस्तार हुआ। कालीदास ने भी इन द्वीप समूहों का उल्लेख किया है।[48]

इस प्रकार इन द्वीप समूहों के राजा तथा जन सामान्य हमेशा भारतीय संस्कृति व विचारधारा की कायल रही जो वसुधैव कुटुम्बकम् की धारणा से अपने को आगे बढ़ाती है तथा एक दूसरे को आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती है।

संदर्भ और टिप्पणी :

1. रामा0 44, 30;
2. कुमार स्वामी– हिस्ट्री ऑफ इंडिया एण्ड इंडोनेशियन आर्ट, पृ. 199, 282
3. मुकर्जी, हर्ष, पृ. 18
4. जातक, 3, 187

5. इंडियन शिपिंग एण्ड मेरिटाइम एक्टिविटी, पृ. 192
6. शकुंतला, 1, 32
7. मजूमदार–चम्पा भूमिका, पृ. 17;
8. टुवर्ड्स ओंकार, पृ. 116;
9. वही, पृ. 21;
10. हिस्ट्री ऑफ जावा, भा. 2, पृ. 82;
11. विशाल भारत, पृ. 59–60;
12. कुमार स्वामी– हिस्ट्री ऑफ इंडिया एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृ. 172;
13. मजूमदार– चम्पा, पृ. 23;
14. विशाल भारत, पृ. 31–60;
15. स्याम एशंट एण्ड प्रोजेक्ट– मार्डन रिब्यू जुलाई 1934
16. विशाल भारत, पृ. 36;
17. वही, पृ. 54
18. वोगेल– द अर्लियेस्ट संस्कृत इंस्क्रिपशन ऑफ जावा– उच्च पत्रिका 1925;
19. चम्पा, लेख नं. 65, पृ. 4;
20. वही, पृ. 232–237;
21. मार्डन रिब्यू जुलाई 1934;
22. वही, अगस्त 1951, पृ. 170;
23. चम्पा, लेख नं. 65
24. वही, पृ. 215
25. वही, पृ. 224
26. मार्डन रिव्यू– अगस्त 1931
27. चम्पा, पृ. 155 व 160
28. कंट्रीब्यूशन ऑफ साउथ इंडिया टू इंडियन कल्चर, पृ. 376;
29. कम्बोडिया, पृ. 70
30. चम्पा, लेख नं. 11–12 व 39
31. कंट्रीब्यूशन ऑफ साउथ इंडिया टू इंडियन, कृष्णा स्वामी, पृ. 373;
32. वही, पृ. 378
33. कुमार स्वामी– हिस्ट्री ऑफ इंडिया एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृ. 177;
34. चम्पा, पृ. 181
35. विशाल भारत, पृ. 196
36. कृष्णा स्वामी– कंट्रीब्यूशन ऑफ साउथ इंडिया, पृ. 376
37. वही, पृ. 377
38. चम्पा, पृ. 74;
39. हिस्ट्री ऑफ इंडिया एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृ. 182;
40. चम्पा, पृ. 220
41. कुमार स्वामी– हिस्ट्री ऑफ इंडिया एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृ. 213;
42. आ. स. मे. नं. 55;
43. वाटर हवेनसांग भा. 1, पृ. 48;
44. कुमार स्वामी– हिस्ट्री ऑफ इंडिया एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृ. 189;
45. गंगा–पुरात्वांक, पृ. 130;
46. उदयगिरि गृहा–लेख (गु. ले. नं. 6)
47. कुमार स्वामी– आर्ट एण्ड क्राफ्ट इन इंडिया, पृ. 166;
48. रघुवंश, 6, 57;